ए. पी. एस. एम. कॉलेज, बरौनी
ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा

हिन्दी विभाग, स्नातक प्रथम वर्ष(प्रथम पत्र)
सत्र-2020-2023,

डॉ मेनका कुमारी

विद्यापति पदावली की गेयधर्मी विशेषताएँ

- विद्यापति के पदों की सबसे बड़ी विशेषता उसकी संगीतात्मकता ही है। विद्वानों से लेकर हलवाहों तक की मण्डली में विद्यापति के पदों की लोकप्रियता का मूल कारण इसकी सहज संगीतात्मकता, सरल सम्प्रेषणीयता और उसमें व्याप्त लोक चित्त की भावनाओं का अनुगूँज ही है। गीतिमयता इन गीतिकाव्यों का प्राण-तत्व है। विदित है कि मैथिली में रचे गए उनके सारे पद गीति हैं।

- गेयधर्मिता की परिपूर्णता का ही परिणाम है कि गायन के समय न तो किसी सिद्ध संगीतज्ञ को रागों के सारे शास्त्रीय विधानों को लागू करने में; संगीत शास्त्रा के नियम-कायदे लगाने में; लय, ताल, छन्द, मात्र की गणना में कोई भी त्रुटि दिखती; न ही संगीत शास्त्रा के व्याकरणिक शिष्टाचार से अनभिज्ञ किसी निपट साधारण व्यक्ति को। सारे ही लोग इन्हें तन्मयता से गाकर आत्मसुख प्राप्त करते हैं।

- वस्तुतः इन गीतों की संरचना में ही संगीतात्मकता इस तरह पिरोई हुई है कि लयबद्ध करने में गायकों को कोई असुविधा नहीं होती। प्रो. मैनेजर पाण्डेय का कहना है कि "गीतकाव्य में काव्यानुभूति के साथ गीतकार की तन्मयता के अनुरूप ही पाठकीय तन्मयता सम्भव होती है। गीतकाव्य वैयक्तिक अनुभूति की व्यंजना है, किन्तु उसमें लोक-हृदय का स्पन्दन भी होता है, यही कारण है कि वैयक्तिक गीत समूहगीत बन जाते हैं (भक्ति आन्दोलन और सूरदास का काव्य/पृ. 260)।"

- विद्यापति के गीतों में यह बहुत बड़ी विशेषता है कि यहाँ सारे काव्यगीतों में गीतकारों की तन्मयता के अनुरूप पाठकीय तन्मयता के सारे तत्व उपस्थित हैं, जिस कारण वे तत्क्षण उनमें लीन होकर एकात्म्य स्थापित कर लेते हैं। पाठक, भावक और गायक--तीनों ही वर्गों के लोग इन गीतों में उतनी ही तन्मयता से खो जाते हैं, जितनी रचनाकार की रही होगी। उनकी गीति रचनाएँ, चाहे भक्तिपरक हों अथवा शृंगारपरक, शक्ति वन्दना हो या गंगा स्तुति या शिव नचारी; विरह-विलाप हो या मिलन-सुख के गीत... सबके-सब भावक को लीन करने में सफल हैं।

- पावस की रात में मेघ जब अपनी सारी कलाओं से बरस रहा होता है, तब घर में अकेली बैठी कोई युवती अपने पिया की अनुपस्थिति की पीड़ा किस तरह सहती है, इसको चित्रित करते समय महाकवि ने जब ‘सखि हे हमर दुखक नहि ओर’ गीत लिखा होगा तो कितनी तन्यमयता रही होगी, यह कल्पना उस गीत की पंक्तियों को देखकर की जा सकती है। इस गीत में यौन पिपासा, देह लिप्सा और उद्धत कामुकता से आतुर किसी कामुक युवती की अश्लील काम भावना नहीं, विरह की आत्यन्तिक पीड़ा सहती, प्रेम रंग में रंगी एक प्रेम तपस्विनी की व्यथा व्यक्त हुई है, जिसे सुनकर, पढ़कर या गाकर लोग उस दृश्य से एकात्म्य स्थापित कर लेता है।

- इन गीतों में मणि कांचन संयोग की दशा ये है कि एक तरफ चित्रण ऐसे उत्कर्ष पर और दूसरी तरफ गीतिमयता यह, कि पढ़ते हुए पाठक के भीतर आप से आप कोई संगीत बज उठे। शब्दों के उच्चारण होते ही अनुभव हो कि शायद आसपास कोई वाद्य यन्त्र बज रहा है, कोई मादक संगीत चल रहा है, जो भीतर से हृदय को कहीं कुरेदता है:

झम्पि घन गरजन्ति सन्तत भुवन भरि बरिसन्तिया
कन्त पाहुन काम दारुण सघने खर शर हन्तिया।
कुलिश कत शत पात मुदिर मयूर नाचत मातिया
मत्त दादुर डाके डाहुकि फाटि जायत छातिया।

- विद्यापति के इन गीतों को आदर्श मानने वाले भावकों को प्रो. मैनेजर पाण्डेय की यह धारणा सही लगेगी कि “गीत काव्य में नाद-तत्व या संगीत सम्वेदना से उद्भूत लयात्मक बोध अनिवार्य होता है। गीत और संगीत का सम्बन्ध आत्मिक है, आन्तरिक है। गीत काव्य में भावों की गति लयात्मक होती है।कृसंगीत गीतकाव्य का सहज अंग है। गीतकाव्य में कहीं संगीत से काव्यत्व दब जाता है और कहीं काव्यत्व से संगीत अनुशासित होता है, लेकिन श्रेष्ठ गीतकाव्य में काव्य और संगीत का पूर्ण सामंजस्य होता है(भक्ति आन्दोलन और सूरदास का काव्य/पृ. 261)।”

- महाकवि विद्यापति के इन गीतों को देखते हुए स्पष्ट होता है कि यहाँ भावों की लयात्मक गति में काव्य और संगीत का अनूठा सामंजस्य है। प्रो. पाण्डेय कहते हैं, “विद्यापति के पदों में सौन्दर्य चेतना का आलोक भावानुभूति की तीव्रता, घनत्व एवं व्यापकता और लोकगीत तथा संगीत की आन्तरिक सुसंगति है। कुछ आलोचकों का मत है कि विद्यापति के गीत लोकगीत के अधिक निकट हैं और उनमें संगीत की शास्त्रीयता का अभाव है। विद्यापति के गीतों में संगीत के तत्वों का अभाव नहीं है, क्योंकि लोचन कवि ने रागतरंगिनी में विद्यापति के गीतों की संगीतात्मकता का विशद विवेचन किया है।

- विद्यापति के गीतों का प्रभाव सूरदास के लीला पदों के रूप में दिखाई पड़ता है...विद्यापति और सूरदास दोनों ही भक्ति आन्दोलन के कवि हैं, दोनों के काव्य में लोक गीत की मौखिक परम्परा का सर्जनात्मक रूप व्यक्त हुआ है। ये दोनों ही हिन्दी जगत के दो जनपदों की भाषा के ग्रामगीतों के कलात्मक रूप के निर्माता और उन गीतों में जन संस्कृति के रचनाकार हैं (भक्ति आन्दोलन और सूरदास का काव्य/पृ. 264)।''

- प्रो. मैनेजर पाण्डेय ने गीतिकाव्य में संगीत के तीन स्वरों की उपस्थिति मानी है--शब्द संगीत, नाद संगीत और भाव या विचार संगीत। इस आशय की चर्चा पूर्व में भी हो चुकी है कि गीतिकाव्य हमें हृदय और मस्तिष्क--दोनों धरातलों पर उद्‌बुद्ध करता है। लय से भावना को सहलाता है और अर्थ से मस्तिष्क अर्थात् विचार को। प्रो. पाण्डेय की इस पंक्ति से यहाँ समर्थन लिया जा सकता है कि “शब्द संगीत और नाद संगीत से क्रमशः अर्थ संगीत तथा लय संगीत की रचना होती है (भक्ति आन्दोलन और सूरदास का काव्य/पृ. 261)।”

- महाकवि विद्यापति के कई गीत यदि लोक कण्ठ में रच-बस गए हैं तो उसका कारण यही है कि यहाँ शब्द संगीत नाद संगीत और भाव संगीत--तीनों एकमेक होकर ऐसी त्रिवेणी बहा रहा है, मानो गीतिकाव्य का आनन्दातिरेक यहीं से शुरू होकर यहीं खत्म हुआ चाहता है।

- जब ‘के पतिया लए जायत रे’, ‘सखि हे, हमर दुखक नहि ओर’, ‘सखि की पूछसि अनुभव मोहि’, ‘प्रथम समागम भुषल अनंग’, ‘उगना रे मोर कतए गेलाह’, ‘जय-जय भैरवि असुर भयाउनि’, ‘बड़ सुखसार पाओल तुअ तीरे’कृजैसे गीतों के पद पढ़े जाते हैं तो इनमें शब्द संगीत, नाद संगीत और भाव संगीत की ऐसी ताकत भरी हुई है कि बिना किसी प्रयास के नितान्त अपटु और लयहीन मनुष्य के मुँह से भी गीत फूट पड़ता है। उनके गीतों को गाने की जरूरत नहीं होती, यहाँ संगीत तत्व इतना बलवान है कि वह स्वतः फूट पड़ता है।

- प्रो. मैनेजर पाण्डेय कहते हैं, “कभी-कभी शिष्ट साहित्य का वह अंश जिसमें जनमानस की दशाओं की सहज व्यंजना होती है, लोक साहित्य का अंग बन जाता है।” विद्यापति के गीतों के सन्दर्भ में यह कथन सौ फीसदी सच है। जनपद में लोकगीतों की तरह व्याप्त उनके गीतों का कारण ढूँढने में पाठकों को अधिक परेशानी नहीं होनी चाहिए। यहाँ मनुष्य के राग-विराग, संयोग-वियोग, क्रोध-स्नेह--- रंग और पानी की तरह घुला-मिला है।